International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 7 No. 35 March – April - 2026

अनुज लुगुन की कविताओं में पर्यावरणीय चेतना: चुनिंदा कविताओं के संदर्भ में...

प्रा. निलेश श्रावण गायकवाड

सहायक प्राध्यापक (अस्थायी) हिंदी विभाग, संगमनेर नगरपालिका कला, दा. ज. मालपाणी वाणिज्य एवं ब. ना. सारडा विज्ञान महाविद्यालय (स्वशासी), संगमनेर

Corresponding Author – प्रा. निलेश श्रावण गायकवाड

DOI - 10.5281/zenodo.20485593

प्रस्तावना:

समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरणीय चेतना एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में उभरकर सामने आई है, विशेषतः उन कवियों के यहाँ जो हाशिए के समाज, विशेषकर आदिवासी जीवन और प्रकृति के अंतर्संबंध को अपनी रचनाओं का आधार बनाते हैं। अनुज लोगों की कविताएँ इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि उनमें प्रकृति केवल सौंदर्य का विषय नहीं, बल्कि जीवन, अस्तित्व, संघर्ष और अस्मिता का मूल आधार है। 'अघोषित उलगुलान', 'बसंत के बारे में कविता' और 'जंगल सन्ताल' जैसी कविताएँ पर्यावरणीय संकट को केवल भौतिक स्तर पर नहीं, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संदर्भों में भी देखने की दृष्टि प्रदान करती हैं।

'अघोषित उलगुलान' कविता में कवि ने आधुनिक विकास और शहरीकरण के प्रभाव से उत्पन्न पर्यावरणीय और मानवीय संकट का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है। कविता की शुरुआत में ही "अल सुबह दांडू' का काफ़िला रुख़ करता है शहर की ओर और साँझ ढले वापस आता है परिन्दों के झुंड-सा" [1] पंक्ति एक ऐसे श्रमजीवी जीवन का संकेत देती है, जो प्रकृति से कटकर शहर की ओर प्रवास करने को विवश है। यहाँ 'परिन्दों का झुंड' एक प्राकृतिक प्रतीक है, किंतु उसका प्रयोग मानवीय जीवन की मजबूरी को दर्शाने के लिए किया गया है।

कवि आगे कहता है—"कंक्रीट से दबी पगडंडी की तरह दबी रह जाती है जीवन की पदचाप बिलकुल मौन!" [2] - यह पंक्ति अत्यंत गहन अर्थ लिए हुए है। पगडंडी, जो कभी प्राकृतिक जीवन का सहज मार्ग थी, अब कंक्रीट के नीचे दब चुकी है। यह केवल भौतिक परिवर्तन नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक और पारिस्थितिक विनाश का प्रतीक है। 'जीवन की पदचाप' का मौन हो जाना यह दर्शाता है कि मनुष्य की प्राकृतिक पहचान और उसकी आवाज़ दोनों ही दब चुकी हैं।

इसी कविता में "कट रहे हैं वृक्ष माफियाओं की कुल्हाड़ी से और बढ़ रहे हैं कंक्रीटों के जंगल" पंक्ति पर्यावरणीय असंतुलन की भयावहता को उजागर करती है। जंगल, जो आदिवासी जीवन का केंद्र थे, अब पूँजीवादी विकास की भेंट चढ़ रहे हैं। यहाँ 'कंक्रीटों के जंगल' एक विडंबनात्मक बिंब है, जो यह दर्शाता है कि कृत्रिमता ने प्राकृतिकता का स्थान ले लिया है। इस प्रक्रिया में केवल पेड़ों का विनाश नहीं हो रहा, बल्कि जैव-विविधता, जलस्रोत, और संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र प्रभावित हो रहा है।

कविता में यह भी उल्लेखनीय है कि "कोई नहीं बोलता जंगलों के कटने पर, पहाड़ों के टूटने पर, नदियों के सूखने पर" [3] - यह पंक्ति समाज की संवेदनहीनता को उजागर करती है। पर्यावरणीय संकट को लेकर मौन रहना स्वयं एक अपराध के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसके विपरीत, लोग

'आरक्षण' और 'धर्मांतरण' जैसे मुद्दों पर बहस करते हैं, जो यह दर्शाता है कि वास्तविक समस्याओं से ध्यान भटकाकर सतही मुद्दों पर चर्चा की जा रही है।

'बसंत के बारे में कविता' में कवि ने प्रकृति के सौंदर्य और यथार्थ के बीच के गहरे अंतर्विरोध को प्रस्तुत किया है। सामान्यतः बसंत को आनंद, नवजीवन और उल्लास का प्रतीक माना जाता है, किंतु यहाँ कवि बसंत पर कविता लिखने से भयभीत है— "बसंत के बारे में कविता लिखने से डरता हूँ... अपनी भाषा और शब्दों के दिवालिया हो जाने से।" [4] यह भय इस बात का संकेत है कि जब वास्तविक जीवन दुःख, हिंसा और असमानता से भरा हो, तब केवल प्रकृति के सौंदर्य का वर्णन करना एक प्रकार की असंवेदनशीलता हो सकती है।

कवि जब कहता है - "और पाता हूँ अपनी बहन को बन्दूक की नोक से आत्मा के जख्म सीते हुए" [5] - तो यह पंक्ति पर्यावरणीय संकट को सामाजिक हिंसा और शोषण से जोड़ती है। यहाँ प्रकृति का विनाश और मनुष्य का उत्पीड़न एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। इसी प्रकार "उसके पास ही होती है एक उदास और ठहरी हुई नदी" [6] पंक्ति में नदी का मानवीकरण करते हुए उसकी पीड़ा को व्यक्त किया गया है। 'ठहरी हुई नदी' यह संकेत देती है कि प्राकृतिक प्रवाह रुक चुका है, जो पर्यावरणीय असंतुलन का प्रतीक है।

कविता में आगे 'अपने बच्चों और मवेशियों की डूबती हुई चीख' और 'दूसरे हिस्से के नागरिकों को पिकनिक मनाते' देखने का दृश्य अत्यंत मार्मिक है। यह दृश्य सामाजिक विषमता और पर्यावरणीय अन्याय को उजागर करता है। एक ओर कुछ लोग प्राकृतिक आपदाओं और संसाधनों की कमी से जूझ रहे हैं, वहीं दूसरी ओर कुछ लोग उसी प्रकृति का उपभोग मनोरंजन के लिए कर रहे हैं।

'जंगल सन्ताल' कविता पर्यावरणीय चेतना को ऐतिहासिक और वैचारिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करती है। इसमें कवि ने यह स्पष्ट किया है कि आदिवासी समाज के लिए 'आजादी' का अर्थ केवल राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार है। "नवजात सन्तालों के कदम धरती पर पड़ते हैं... कि आजादी के लिए जमीन, हवा और पानी आज भी पहली शर्त है" [7] - यह पंक्ति इस विचार को पुष्ट करती है कि पर्यावरण ही जीवन और स्वतंत्रता का आधार है।

कवि आगे कहता है कि "ब्रह्मपुत्र, इन्द्रावती, गोदावरी, दामोदर या कोयल-कारो के सूख जाने पर कहीं नहीं रह जाएगा जीवन" [8] यह चेतावनी पर्यावरणीय संकट की गंभीरता को दर्शाती है। नदियों का सूखना केवल जल की कमी नहीं, बल्कि जीवन के संपूर्ण तंत्र का समाप्त होना है।

इस कविता में यह भी उल्लेखनीय है कि मुख्यधारा के इतिहास ने आदिवासी संघर्षों को नजरअंदाज किया है। "जिन्होंने अपनी ज़मीन की वापसी की माँग की... उन्हें दूसरे छोर पर खड़ी कर देती है कविता" [9] - यह पंक्ति दर्शाती है कि कविता एक वैकल्पिक इतिहास रचती है, जो पर्यावरणीय और सामाजिक न्याय के प्रश्नों को केंद्र में लाती है।

इन तीनों कविताओं में पर्यावरणीय चेतना एक साझा सूत्र के रूप में उपस्थित है, जो केवल प्रकृति के संरक्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक अस्मिता और मानवीय गरिमा से भी जुड़ी हुई है। 'अघोषित उलगुलान' में यह चेतना प्रतिरोध के रूप में प्रकट होती है, 'बसंत के बारे में कविता' में आत्ममंथन और संवेदनात्मक संकट के रूप में, और 'जंगल सन्ताल' में ऐतिहासिक और वैचारिक पुनर्स्थापन के रूप में।

इन कविताओं का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि इनमें प्रकृति और मनुष्य के बीच सहजीवी संबंध को रेखांकित किया गया है। आदिवासी जीवन में जंगल, नदी,

पहाड़ केवल संसाधन नहीं, बल्कि जीवन के अभिन्न अंग हैं। जब इनका विनाश होता है, तो केवल पर्यावरण ही नहीं, बल्कि संस्कृति, भाषा और पहचान भी संकट में पड़ जाती है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि अनुज लोगों की कविताएँ पर्यावरणीय चेतना को एक व्यापक और गहन दृष्टिकोण प्रदान करती हैं। ये कविताएँ हमें यह समझने के लिए प्रेरित करती हैं कि पर्यावरणीय संकट केवल प्राकृतिक संसाधनों की समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संरचनाओं से गहराई से जुड़ा हुआ है। इन कविताओं के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि जब तक विकास की अवधारणा में प्रकृति और मनुष्य के संतुलन को प्राथमिकता नहीं दी जाएगी, तब तक न तो पर्यावरण सुरक्षित रह सकेगा और न ही मानवता का भविष्य।

इस प्रकार, प्रस्तुत कविताएँ न केवल पर्यावरणीय चेतना का सशक्त दस्तावेज़ हैं, बल्कि वे एक ऐसे वैचारिक हस्तक्षेप का भी कार्य करती हैं, जो हमें अपने समय के ज्वलंत प्रश्नों पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित करता है।

संदर्भ सूची:

1. अघोषित उलगुलान – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 17, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
2. अघोषित उलगुलान – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 17, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
3. अघोषित उलगुलान – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 18, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
4. बसंत के बारे में कविता – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 53, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
5. बसंत के बारे में कविता – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 54, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
6. बसंत के बारे में कविता – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 54, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
7. जंगल सन्ताल – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 48, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
8. बसंत के बारे में कविता – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 48-49, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023
9. बसंत के बारे में कविता – अनुज लुगुन, पृष्ठ क्र. 49, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2023